Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 01-02-2023, Accepted: 19-02-2023, Published: 07-03-2023
Volume 4, Issue 1, 2023, Page No. 5-7

प्रेमचंद–साहित्य की सोदेदशता

आशा रानी
सहायक प्रध्यापिका, हिंदी विभाग, के. एल. पी. कॉलेज, रेवाड़ी, हरियाणा, भारत

सारांश
साहित्य शिरोमणि युग प्रवर्तक प्रेमचंद जी का साहित्य मात्रा मनोरंजन के लिए नहीं वरन् सोद्देश्य लिखा गया साहित्य है। यह उद्देश्य है– समाज–सुधार। समाज के हर वर्ग पर प्रेमचंद जी की नजर थी। चाहे वह किसान हो, मजदूर हो, नारी हो, ग्रामीण हो या नगर का निवासी हो। सभी के जीवन में व्याप्त समस्याओं का प्रतिपादन कर पाठकों का ध्यान आकर्षित करने की चेष्टा की गई है। प्रेमचंद जी के समय वाली गंभीरता के साथ ये ऋण, दहेज–प्रथा, श्रमिकों का शोषण, बेरोजगारी, जैसी अनेक समस्याएँ समाज के विकास में बाधक हैं। ऊपर से बेहतर व उन्नत दिखते समाज की आंतरिक परतों को ये समस्याएँ दीमक की तरह खोखला कर रही हैं। सुखी, समृद्ध व सभ्य नागरिकों वाला समाज ही एक आदर्श व उन्नत समाज बन सकता है। ऐसे ही समाज के निर्माण का स्वप्न लिए प्रेमचंद जी जनसामान्य की समस्याओं का चित्रण कर उनके समाधान के प्रति हमें सचेत करते हैं।

मूल शब्दः प्रेमचंद–साहित्य, समाज–सुधार

वैज्ञानिक एवं शोधात्मक दृष्टिकोण

'सोद्देश्यता' का अर्थ है–उद्देश्य युक्त, उद्देश्यपूर्ण या उद्देश्यसहित होना। इसे हम 'प्रयोजनयुक्त' भी कह सकते हैं। प्रत्येक कार्य के पीछे कोई–न–कोई उद्देश्य या प्रयोजन अवश्य होता है जिसकी सिद्धी हेतु ही वह कार्य किया जाता है। इसी प्रकार साहित्य–रचना भी किसी–न–किसी उददेश्य पर आधारित होती है। 'साहित्य के उद्देश्य' के विषय मे प्रेमचंद जी लिखते हैं–

''साहित्यकार का लक्ष्य केवल महफिल सजाना और मनोरंजन का सामान जुटाना नहीं है। उसका दर्जा इतना न गिराइए। यह देशभक्ति और राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई भी नहीं, बल्कि उनके आगे मशाल दिखाते हुए चलने वाला साहित्य है।''[1]

चाहे कहानी हो या उपन्यास हो, प्रेमचंद जी की अनूठी विशेषता है कि केवल एक समस्या पर ध्यान–केन्द्रण तक सीमित नहीं रहते, अपितु उनके सभी पात्र विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते है और अपनी–अपनी समस्याओं से ग्रस्त है, जैसे–उपन्यास 'गोदान' में होरी ऋण की समस्या से ग्रस्त है। गोबर और झुनिया के प्रसंग से अंतरजातीय विवाह, धनिया, झुनिया व सिलिया के माध्यम से नारी–दुर्दशा, मिस्टर खन्ना व गोविंदी के माध्यम से पति–पत्नी के बीच तनाव व गोबर के माध्यम से शहरी जीवन की कठिनाइयों आदि पर पाठकों का ध्यान एक साथ आकृष्ट किया है। इन पात्रों की विशेषता है कि ये हार नहीं मानते, परिस्थितियों से लड़ते हैं, आशावादी हैं। रामविलास शर्मा जी का भी मानना है–''प्रेमचंद के किसान देवता नहीं हैं, वे मनुष्य हैं। उनमें कमजोरियाँ है, वे उनसे लड़ते हैं। कभी जीतते है, कभी हारते हैं। प्रेमचंद के चरित्र का उत्थान– पतन दिखाने में एक साहसी लेकिन अति व्यथित किसान का ह्रदय पढ़ने में अपनी ज्वलंत प्रतिभा का परिचय दिया है''[2]. गरीबों का खून चूसती महाजनी सभ्यता पर प्रेमचंद जी ने तीव्र प्रहार करते हुए लिखा है–

''मगर इस महाजनी सभ्यता में तो सारे कामों की गरज महज पैसा होती है। किसी देश पर राज्य किया जाता है, तो इसलिए कि महाजनों, पूँजीपतियों को ज्यादा–से–ज्यादा नफा हो। इस दृष्टि से मानो आज दुनिया में महाजनों का ही राज्य है। मनुष्य–समाज दो भागों में बँट गया है। बड़ा हिस्सा तो मरने और खपने वालों का है, और बहुत ही छोटा हिस्सा उन लोगों का, जो अपनी शक्ति और प्रभाव से बड़े समुदाय को अपने बस में किये हुए है। इन्हें इस बड़े भाग के साथ किसी तरह की हमदर्दी नहीं, जरा भी रू–रियाअत नहीं। उसका अस्तित्व केवल इसीलिए है कि अपने मालिकों के लिए पसीना बहाये, खून गिराये और एक दिन चुपचाप इस दुनिया से विदा हो जाये।''[3].

हमारा समाज पुरूष–प्रधान समाज है जिसमें नारी की स्थिति दयनीय हो रही है। अपने अधिकारों व स्वतंत्रता के लिए उसका संघर्ष आज भी जारी है। प्रेमचंद जी नारी–शिक्षा का समर्थन करते हैं और उसके बेहत्तर जीवन की कामना करते हैं। पुरानी व जड़ परंपराओं के बंधन से उसकी मुक्ति चाहते हैं। यह भी अवश्य चाहते हैं कि नारी सुलभ विनम्रता, कोमलता, सेवा, समर्पण जैसे भाव उसमें प्रवाहित रहें। ''सेवा सदन' उपन्यास में उन्होंने घृणित परिस्थितियों में फँसी नारी की पीड़ा को समझा और उसकी समस्याओं को प्रकट किया। 'सेवा सदन' के संदर्भ में रामविलास शर्मा जी के ये विचार उल्लेखनीय हैं–

''सेवा सदन' की मुख्य समस्या भारतीय नारी की पराधीनता है। प्रेमचन्द ने किस तरह तमाम पुरानी सांस्कृतिक परम्पराओं को तोड़ते हुए वर्तमान समाज में नारी की पराधीनता को अपने निठुर और विभत्स रूप में चित्रित किया है, इस पर सहसा विश्वास नहीं होता। हमारे साहित्य में कितन` नाटक, कितने उपन्यास नारी के आत्म–बलिदान, उसके सतीत्व, उसकी पति–सेवा पर नहीं लिख गए? लेकिन कितने लेखकों ने उसकी निस्सहायता, पराधीनता, उसके साथ पशुओं और दासों–जैसे व्यवहार पर नजर डाली थी?''[4].

वर्तमान में कानून द्वारा नारी को जो अधिकार प्राप्त हो पाए हैं उनकी आवश्यकता की घोषणा प्रेमचंद जी ने अपने समय में ही कर दी थी। वे लिखते हैं–''यदि पुरूषों को अब भी उन पर शासन करने का उन्माद हो तो उसे शीघ्र से शीघ्र दूर कर देना चाहिए, क्योंकि वह चाहें दें या न दें, देवियाँ अपने स्वत्वों को लेकर ही रहेंगी। उन्हें हर एक विषय में पुरूषों के समान अधिकार होना चाहिए और इसका निर्णय देवियों ही पर छोड़ देना चाहिए कि वे अपने हितार्थ जो स्वत्व चाहें ले लें। हमारे

विचार में निम्नलिखित विषयों पर नारियों को असन्तोष है और इस असन्तोष को देवियों की इच्छानुसार ही शमन करना पड़ेगा–

1. एक विवाह का नियम स्त्री–पुरूष दोनों ही के लिए समान रूप से लागू हो। कोई पुरूष पत्नी के जीवन–काल में दूसरा विवाह न कर सके।
2. पुरूष की सम्पत्ति पर पत्नी का पूरा अधिकार हो।
3. पिता की सम्पत्ति पर पुत्रों और पुत्रियों का समान अधिकार हो।
4. तलाक का कानून जारी किया जाये और वह स्त्री–पुरूष दोनों ही के लिए समान हो।
5. तलाक के समय स्त्री पुरूष की आधी सम्पत्ति पाये और यदि मौरूसी जायदाद हो, तो उसका एक अंश।''[5].

शहरी जीवन में मध्यम वर्ग की परेशानियों को भी प्रेमचंद जी ने अपनी लेखनी से अभिव्यक्ति दी है। मध्यम वर्ग क्षमता न होते हुए भी दिखावे की जिंदगी जीने को मजबूर होता है। अनेक कुंठाओं से ग्रस्त होता हुआ वह इस दिखावे के जीवन से बाहर नहीं आ पाता। अपने हित और आत्मविश्वास को वह स्वयं ही कहीं दबाता हुआ अपने पतन को निमंत्रण दे डालता है। कहानी 'गबन' में जालपा का पति रमानाथ ऐसे ही वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है जो सहायता प्राप्त करने हेतु अपने मित्रों के समक्ष भी अपनी वास्तविक स्थिति को उजागर नहीं कर पाता है। प्रेमचंद जी लिखते हैं–

''एक दिन वह शाम तक नौकरी की तलाश में मारा–मारा फिरता रहा। शतरंज की बदौलत उसका कितने ही अच्छे–अच्छे आदमियों से परिचय था; लेकिन वह संकोच और डर के कारण किसी से अपनी स्थिति प्रकट न कर सकता था। वह भी जानता था कि यह मान–सम्मान उसी वक्त तक है, जब तक किसी के सामने मदद के लिए हाथ नही फैलाता। यह आन टूटी, फिर कोई बात भी न पूछेगा। कोई ऐसा भलामानस न दीखता था जो सब कुछ बिना कहे ही जान जाये, और उसे कोई अच्छी–सी जगह दिला दे। आज उसका चित्त बहुत खिन्न था। मित्रों पर ऐसा क्रोध आ रहा था कि एक–एक को फटकारे और आयें तो द्वार से दुत्कार दे। अब किसी ने शतरंज खेलने को बुलाया, तो ऐसी फटकार सुनाऊँगा कि बच्चा याद करे; मगर वह जरा गौर करता तो उसे मालूम हो जाता कि इस विषय में मित्रों का उतना दोष न था, जितना खुद उसका। कोई ऐसा मित्र न था, जिससे उसने बढ़–बढ़कर बातें न की हो। यह उसकी आदत थी। घर की असली दशा को वह सदैव बदनामी की तरह छिपाता रहा। और यह उसी का फल था कि इतने मित्रों के होते हुए भी वह बेकार था। वह किसी से अपनी मनोव्यथा न कह सकता था।''[6].

प्रेमचंद जी ने ग्रामीण जीवन की समस्याओं से जूझते किसानों और उनके पशुओं के बीच प्रेम व आत्मयीता के विकास का मार्मिक अंकन कर प्राणीमात्र के प्रति प्रेमभाव को जाग्रत करने की चेष्टा की है। 'दो बैलों की कथा' कहानी में जब झूरी के दोनों बैल–हीरा और मोती झूरी से दूर चले जाते हैं तो अनेक कष्ट सहकर और हर चुनौती से लड़कर वापस लौट आते हैं। उन्हें सब कुछ मंजूर है लेकिन अपने मालिक से दूर जाना नहीं। प्रस्तुत प्रसंग इस बात को स्पष्ट करता है–

''संयोग की बात है, झूरी ने एक बार गोईं को ससुराल भेज दिया। बैलों को क्या मालूम वे क्यों भेजे जा रहें हैं। समझे, मालिक ने हमें बचे दिया। अपना यूँ बेचा जाना उन्हें अच्छा लगा या बुरा, कौन जाने पर झूरी के साले गया को घर तक गोईं ले जाने में दाँतो पसीना आ गया। पीछे से हाँकता तो दोनों दायें–बायें भागते, पगहिया पकड़कर आगे से खींचता तो दोनो पीछे को जोर लगाते। मारता तो दोनों सींग नीचे करके हुँकरते। अगर ईश्वरं ने उन्हे वाणी दीहाती, तो झूरी से पूछते तुम हम गरीबो को क्यों निकाल रहे हो? हमने तो तुम्हारी सेवा करने में कोई कसर नहीं उठा रखी। अगर इतनी मेहनत से काम न चलता था और काम ले लेते, हमे ं तो तुम्हारी चाकरी में मर जाना कबूल था। हमने कभी दाने चारे की शिकायत नहीं की। तुमने जो कुछ खिलाया वह सिर झुकाकर खा लिया फिर तुमने हमें इस जालिम के हाथो क्यों बेच दिया?''[7].

अछूतों की स्थिति का वर्णन कर अछूतोद्धार के लिए भी प्रेमचंद जी ने सशक्त ढंग से लेखनी चलाई है। जन्म के आधार पर ऊँच –नीच का भेद अमानवीय है। सभी मनुष्य हैं और सभी को समानता की नजर से देखा जाना चाहिए। उपन्यास 'कर्मभूमि' में मंदिर में प्रवेश से वंचित अछूतों की अन्यायपूर्ण स्थिति का वर्णन ही नहीं किया गया अपितु उसका व्यवहारिक समाधान भी प्रस्तुत किया गया है। इसी प्रकार कहानी 'ठाकुर का कुआँ' में जीवन जीने के लिए भी उनके पग–पग पर खड़ी चुनौतियों की ओर संकेत किया गया है। कहानी में बीमार जोखू दूषित पानी पीने के लिए मजबूर है क्योंकि उन्हें ठाकुर के कुएँ से पानी पीने की अनुमति नहीं है। गंगी द्वारा ठाकुर के कुएँ से साफ पानी लाने की बात पर जोखू कहता है–

''हाथ–पाँव तुड़वा आएगी और कुछ न होगा। बैठ चुपके से ब्राह्मण – देवता आशीर्वाद देंगे, ठाकुर लाठी मारेंगे, साहू जी एक के पाँच लेंगे। गरीबों का दर्द कौन समझता है। हम तो मर भी जाते हैं, तो कोई द्वार पर झाँकने नहीं आता, कंधा देना तो बड़ी बात है। ऐसे लोग कुएँ से पानी भरने देंगे?''[8].

वर्तमान युग संचार–माध्यमों का युग है। घर–घर में सिनेमा की पहुँच है। एसे में प्रेमचंद जी सिनेमा के दायित्व पर भी अपने विचार प्रकट करते हैं। उनके अनुसार, साहित्य के समान सिनेमा भी समाज को दिशा प्रदान करता है। साहित्य की तरह ही उसमें भी ऐसे चरित्रों का समावेश होना चाहिए जो दर्शकों के आदर्श और प्रेरणा–स्त्रोत बन सकें और सकारात्मकता का संचार करें। इस प्रकार सिनेमा समाज में अच्छे नागरिकों का निर्माण कर समाज की उन्नति में योगदान दे। प्रेमचंद जी के शब्दों में–

''किसी साहित्य की महत्ता की जाँच यही है कि उसमें आदर्श चरित्रों की सृष्टि हो। हम सब निर्मल जीव हैं, छोटे–छोटे प्रलोभनों में पड़कर हम विचलित हो जाते हैं, छोटे–छोटे सकं टों के सामने हम सिर झुका देते हैं और जब हमें अपने साहित्य में ऐसे चरित्र मिल जाते है, तो हमें उनसे प्रेम हो जाता है, हममें साहस का जागरण होता है और हमें अपने जीवन का मार्ग मिल जाता है। अगर सिनेमा इसी आदर्श को सामने रखकर अपने चित्रों की सृष्टि करता, तो वह आज संसार की सबसे बलवान् संचालक–शक्ति होता, मगर खेद है कि इसे कोरा व्यवसाय बनाकर हमने उसे कला के ऊँचे आसन से खींचकर ताड़ी या शराब की दुकान की सतह तक पहुँचा दिया है, यही कारण है कि अब सर्वत्र यह आन्दोलन होने लगा है कि सिनेमा पर नियन्त्रण रखा जाये और उसे मनुष्य की पशुताओं को उत्तेजन देने की कुप्रवृत्ति से रोका जाये।''[9]. वर्तमान भौतिकवादी युग में पैसे की बढ़ती अहमियत पर भी उन्होने दुःख प्रकट किया ं है। रिश्ते नाते, मान–सम्मान सभी का आधार पैसा ही रह गया है। पैसा हाने पर ही व्यक्ति हर तरह से गुणी माना जाता है अन्यथा गुणों की भी कद्र नहीं होती। चाहे कोई व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में कार्य कर रहा हो उसका उद्देश्य केवल धन कमाना रह गया है, न कि जन–कल्याण। इस लालची मानसिकता पर चोट करते हुए प्रेमचंद जी लिखते हैं–

''धन–लोभ ने मानस–भावों को पूर्ण रूप से अपने अधीन कर लिया है। कुलीनता और शराफत, गुण और कमाल की कसौटी पैसा, और केवल पैसा है। जिनके पास पैसा है वह देवता–स्वरूप है, उसका अन्तःकरण कितना ही काला क्यों न हो। साहित्य, संगीत और कला–सभी धन की दहे ली पर माथा टके नेवालों में हैं। यह हवा इतनी जहरीली हो गयी है कि इसमें जीवित रहना कठिन होता जा रहा है। डॉक्टर और हकीम हैं कि वह बिना

लम्बी फीस लिये बात नहीं करते। वकील और बैरिस्टर है कि वे मिनटों को अशर्फियों से तौलते है। गुण और योग्यता की सफलता उसके आर्थिक मूल्य के हिसाब से मानी जा रही है। मौलवी साहब और पण्डित जी भी पैसे वालों के बिना पैसे के गुलाम है। अखबार उन्हीं का राग अलापते है। इस पैसे ने आदमी क दिलोदिमाग पर इतना कब्जा जमा लिया है कि उसके राज्य पर किसी ओर से भी आक्रमण करना कठिन दिखायी देता है। वह दया और स्नेह, सच्चाई और सौजन्य का पुतला मनुष्य दया–ममता से शून्य जड़यन्त्र बनकर रह गया है।''[10].

निष्कर्ष

इस प्रकार प्रेमचंद जी पीड़ितों और शोषितों की आवाज थे। उन्होंने समाज की इन समस्याओं को करीब से देखा था और इनसे उत्पन्न दर्द को स्वयं महसूस किया था जिसके कारण उनका संपूर्ण साहित्य सामाजिक सुधार की कामना लिए हुए समाज की सच्ची झाँकी प्रस्तुत करता है जिसमें न कहीं कोई बनावटीपन हैं, न शब्दों या अलंकारों का आडंबर। उनके साहित्य की भाषा हो या भाव–सभी पक्ष जनसामान्य से प्राप्त हैं और उन्हीं को समर्पित हैं। यही कारण है कि उनका साहित्य जनता में अतुलनीय रूप से प्रसिद्ध हो पाया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. साहित्य का उद्देश्यः लेखक–प्रेमचंद, प्रथम संस्करण, (पृष्ठ–15)
2. प्रेमचंद और उनका युगः लेखक–डॉ. रामविलास शर्मा, प्रथम संस्करण (पृष्ठ–53)
3. प्रेमचंद रचना–संचयनः लेखक–प्रेमचंद, सं.–निर्मल वर्मा, कमल किशोर गोयनका, प्रथम संस्करण (पृष्ठ–800)
4. प्रेमचंद और उनका युगः लेखक–डॉ. रामविलास शर्मा, प्रथम संस्करण (पृष्ठ–32)
5. प्रेमचंद रचना–संचयनः लेखक–प्रेमचंद, सं.–निर्मल वर्मा, कमल किशोर गोयनका, प्रथम संस्करण (पृष्ठ–728)
6. गबन : लेखक–प्रेमचंद, प्रकाशन वर्ष–1987 (पृष्ठ–25)
7. प्रेमचंद रचना–संचयनः लेखक–प्रेमचंद, सं.–निर्मल वर्मा, कमल किशोर गोयनका, प्रथम संस्करण (पृष्ठ–184)
8. प्रेमचंद रचना–संचयनः लेखक–प्रेमचंद, सं.–निर्मल वर्मा, कमल किशोर गोयनका, प्रथम संस्करण (पृष्ठ–226)
9. प्रेमचंद रचना–संचयनः लेखक–प्रेमचंद, सं.–निर्मल वर्मा, कमल किशोर गोयनका, प्रथम संस्करण (पृष्ठ–791)
10. प्रेमचंद रचना–संचयनः लेखक–प्रेमचंद, सं.–निर्मल वर्मा, कमल किशोर गोयनका, प्रथम संस्करण (पृष्ठ–801)